

राजेन्द्र कन्स्ट्रक्शन कंपनी

बनाम

महाराष्ट्र हाउसिंग और क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण और अन्य

11 अगस्त, 2005

सी के ठाकर और पी के बालासुब्रमण्यन, जे जे

मध्यस्थता अधिनियम, 1940

धारा 17 मध्यस्थता पंचाट- वैधता के समर्थन में कोई कारण नहीं-  
न तो मध्यस्थता प्रस्ताव और न ही संविधा में मध्यस्थ द्वारा कारण  
अभिलिखित किया जाना प्रावधानित था- अभिनिर्धारित किया गया: उच्च  
न्यायालय इस आधार पर पंचाट को अपास्त नहीं कर सकता कि वह  
कारणों से समर्थित नहीं था और एक तर्कसंगत पंचाट नहीं था- मध्यस्थता  
और सुलह अधिनियम 1996, धारा 31 (3) धारा 13 और 29- ब्याज-  
पंचाट- मध्यस्थ की शक्ति- मध्यस्थ ने वाद की तारीख से पंचाट की तारीख  
तक और पंचाट की तारीख से भुगतान की तारीख या डिक्री की तारीख, जो  
भी पहले हो, तक मूल राशि पर 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज  
दिया- वैधता-अभिनिर्धारित किया गया: मध्यस्थ के पास पूर्व-संदर्भ,  
विचाराधीन और पंचाट के बाद के चरणों में ब्याज देने की शक्ति है-

हालांकि तथ्यों के दृष्टिगत ब्याज को घटाकर 10 प्रतिशत प्रति वर्ष करना उचित न्यायसंगत और न्याय के हित में माना गया।

अपीलार्थी एक साझेदारी फर्म थी जो निर्माण का व्यवसाय कर रही थी। अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी के लिए कुछ निर्माण कार्य पूरे किए। हालाँकि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी को कोई भुगतान नहीं किया। इसलिए मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की धारा 21 के तहत विवादों को एकमात्र मध्यस्थ के पास भेजा गया था। एकमात्र मध्यस्थ ने एक निश्चित राशि और मूल राशि पर 18 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वाद की तारीख से पंचाट की तारीख तक और पंचाट की तारीख से भुगतान की तारीख या डिक्री की तारीख जो भी पहले हो, तक ब्याज दिया। पंचाट को अधिनियम की धारा 17 के तहत अदालत का नियम बनाया गया था।

उच्च न्यायालय ने इस आधार पर पंचाट को अपास्त कर दिया कि एकमात्र मध्यस्थ द्वारा पारित किया गया पंचाट तर्कसंगत नहीं था। उच्च न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि विचाराधीन अवधि के बाद 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भुगतान करने के निर्देश किसी भी कारण से समर्थित नहीं किये गये हैं। फलतः यह अपील दायर की गई है।

अपीलार्थी की ओर से यह तर्क रहा कि मध्यस्थ कार्यवाही करार अधिनियम 1940 (पुराने अधिनियम) से शासित होती हैं और मध्यस्थता एवं सुलह अधिनियम 1996 (नया अधिनियम) इन पर लागू नहीं है और

चूंकि पुराने अधिनियम के तहत कारणों को अभिलिखित करना अनिवार्य नहीं था एवं पक्षकारान के मध्य भी ऐसा कोई करार या संविधा नहीं थी जिसमें मध्यस्थ द्वारा कारणों को अभिलिखित करना अनुबंधित था, इस कारण मध्यस्थ तर्कसंगत पंचाट बनाने हेतु बाध्य नहीं था और विचारणीय न्यायालय द्वारा भी प्रत्यर्थी द्वारा उठाई गई आपत्तियों पर विचार किया गया था और पंचाट को न्यायालय का नियम बनाने के आदेश दिए और तदुसार डिक्री बनाने के भी आदेश दिए गए। इन परिस्थितियों में उक्त न्यायालय के पास मध्यस्थ द्वारा पारित पंचाट और विचारणीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय व आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं था। प्रत्यर्थी की ओर से, यह तर्क दिया गया कि यह एकमात्र मध्यस्थ पर संविधा में कारण अभिलिखित करने संबंधी अनुबंध नहीं होने व इस बाबत् करार नहीं होने के पेश्चात् भी पक्षकारान के प्रतिद्वंदी अभिवचनों पर अपने विवेक का उपयोग करने, न्यायालय द्वारा विरचित विवाधकों पर विचार करने एवं विवाधकों पर निष्कर्ष कारण सहित अभिलिखित कर निर्णय देने का दायित्व था और चूंकि मध्यस्थ को प्रश्नों पर विचार कर मामले को अभिनिर्धारित करना था, इस कारण उसके द्वारा निर्णय के समर्थन में कारणों को अभिलिखित किया जाना चाहिए था और कारणों को अभिलिखित किया जाना 'प्राकृतिक न्याय' के सिद्धांतों का एक अंश है। इस कारण, कारण-रहित (तर्करहित) पंचाट शून्य अमान्य और अप्रभावी माना जाना चाहिए।

आंशिक रूप से अपील स्वीकार कर न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

1- वर्तमान पंचाट मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 के तहत ना होकर मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के तहत है। अतः यह स्पष्ट है कि उन्हें उच्च न्यायालय द्वारा इस कारण अपास्त नहीं किया जा सकता था कि पंचाट कारणों से समर्थित नहीं थे और तर्कसंगत पंचाट नहीं थे। (593-एफ- जी)

रायपुर विकास प्राधिकरण बनाम मैसर्स चोखामल ठेकेदार का अनुसरण (1989) 2 एस सी सी 721।

टी एन विद्युत बोर्ड बनाम पुल सुरंग निर्माण, (1997) 4 एस सी सी 584 121 कुंडले एंड एसोसिएट्स बनाम कोंकण होटल्स (पी) लिमिटेड (1999) 3 एस सी सी 533 और बिल्ड इंडिया कंस्ट्रक्शन सिस्टम बनाम भारत संघ, (2002) 5 एस सी सी 433 पर भरोसा किया गया।

पंजाब राज्य बनाम भाग सिंह, (2004) 1 एस सी सी 547 और गोरा लाल बनाम भारत संघ (2003) 12 एस सी सी 459 लागू नहीं हुए।

ब्रीन बनाम अमाल्गमेटेड अभियांत्रिकी संघ, (1971) 1 ऑल ई आर 1148 और अलेक्जेंडर मशीनरी (डेडली) लिमिटेड बनाम क्रेबट्री (1974) आई सी आर 120 का हवाला दिया।

रोनाल्ड बर्नस्टीन: मध्यस्थता अभ्यास की हस्तपुस्तिका का हवाला दिया।

2. फलतः एकमात्र मध्यस्थ द्वारा पारित पंचाट अवैध या गैरकानूनी नहीं ठहराया जा सकता। इस तरह के पंचाटों को न्यायालय का नियम बनाते हुए विचारणीय न्यायालय ने ऐसी कोई अवैधता नहीं की थी जिससे पंचाटों को अपोषणीय घोषित किया जा सके और उच्च न्यायालय उन्हें अपास्त नहीं कर सकता था। (595 - ई-एफ)

3- एकमात्र मध्यस्थ के पास पूर्व-संदर्भित अवधि, विचाराधीन अवधि एवं पंचाट के बाद की अवधि, तीनों चरणों के लिए ब्याज निर्धारित करने की शक्ति होती है। वर्तमान प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, यह उचित न्यायसंगत और न्याय के हित में होगा यदि ब्याज की दर को घटाकर 10 प्रतिशत प्रति वर्ष कर दिया जाए। (596- ए-बी) भगवती ऑक्सीजन लिमिटेड बनाम हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड ए आई आर (2005) एस सी 2071 पर भरोसा किया।

कार्यकारी अभियंता, ढेंकनाल लघु सिंचाई प्रभाग बनाम एन. सी बुधराज (2001) 2 एस सी सी 721 सचिव सिंचाई विभाग उड़ीसा सरकार बनाम जी सी रॉय (1992)1 एस सी सी 508 और हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड वी जम्मू और कश्मीर राज्य (1992) 4 एस सी सी 217 का हवाला दिया।

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील संख्या 5045-5046/2005।

बॉम्बे उच्च न्यायालय के प्रथम अपील संख्या 528/1996 व 529/1996 में पारित निर्णय और आदेश दिनांकित 4-6-2003 के विरुद्ध।

उदय यू ललित अतुल कराड गौतम गोदारा और रवींद्र केशवराव अधुसुरे अपीलार्थी की ओर से।

रमेश पी भट्ट वरिष्ठ अधिवक्ता, अनुराग एम श्रॉफ एम एस गिरीश और एम एन श्रॉफ प्रत्यार्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय सी के ठककर द्वारा दिया गया था।

इजाजत दी गई।

वर्तमान अपीलें बॉम्बे हाइकोर्ट (औरंगाबाद पीठ) की अनुच्छेद पीठ की सन् 1996 की प्रथम अपील संख्या 528 529 में पारित निर्णय व आदेश दिनांकित 04 जून 2003 के विरुद्ध निर्दिष्ट है। उक्त फेसले द्वारा हाइकोर्ट ने महाराष्ट्र हाउजिंग एण्ड एरिया डेवलेपमेंट ऑथोरिटी द्वारा दायर की गई अपील को स्वीकार कर वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश द्वारा विषिष्ट वाद संख्या 265/19 व 266/19 में दिनांक 25 अगस्त 1996 में पारित डिक्री को अपास्त कर दिया गया।

सुसंगत तथ्य जिस कारण से ये अपीलें की गईं संक्षेप में इस प्रकार हैं- अपीलकर्ता राजेंद्र कंस्ट्रक्शन कंपनी (संक्षेप में आरसीसी) एक साझेदारी फर्म है। जो निर्माण कार्य में व्यवसाय करती है। महाराष्ट्र हाउजिंग एण्ड एरिया डेवलेपमेंट ऑथोरिटी (संक्षेप में म्हाडा) ने एक निविदा नोटिस नंबर

4/87- 88 जारी किया जिसमें स्कॉट ग्रिनी गारखेडा के पास निम्न आय समूह योजना (एलआईजी) के तहत 444 किराए के घरों के निर्माण के लिए और गिरिहा निर्माण भवन औरंगाबाद के पास मध्य आय समूह (एमआईजी) के तहत 192 किराए के घरों के निर्माण के लिए पंजीकृत ठेकेदारों से प्रस्ताव मांगे गए।

नवंबर 1987 में आरसीसी के पक्ष में प्रथम कार्य हेतु 5038068 रूपए की धनराशि के कार्यादेश जारी किए गए एवं द्वितीय कार्य हेतु 7456972 रूपए की धनराशि के कार्यादेश जारी किए गए। अपीलकर्ता के अनुसार पहली योजना के लिए निर्माण कार्य पूर्ण करने के लिए 18 महीने की व दूसरी योजना के लिए 12 महीने की समयसीमा नियत थी। हालांकि मौजूदा व सहमत वस्तुओं में भिन्नता व म्हाडा के निर्देशानुसार हुए कुछ अतिरिक्त कार्यों के कारण निर्माण कार्य के निष्पादन में देरी हुई। आरसीसी द्वारा समयसीमा को बढ़ाने का निवेदन किया जिसे मंजूर कर लिया गया और विस्तारित अवधि में म्हाडा की संतुष्टि के अनुसार काम पूरा कर लिया गया। हालांकि म्हाडा द्वारा किसी न किसी बहाने से अंतिम बिल तैयार करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया गया और आरसीसी को कोई भुगतान नहीं किया गया। आरसीसी का मामला यह था कि उसके भुगतान पर ठीक से विचार नहीं किया गया फिर भी आरसीसी से म्हाडा द्वारा किया गया भुगतान”

इसके बाद आरसीसी ने 17 अप्रैल 1991 को म्हाडा को नोटिस जारी कर 1901600 रूपए प्रथम योजना के निर्माण कार्य के लिए अतिरिक्त राशि व 2108100 रूपए द्वितीय योजना के निर्माण कार्य के लिए अतिरिक्त राशि की मांग की। हालांकि म्हाडा ने भुगतान करने से इनकार कर दिया। आरसीसी ने संविदा के अनुच्छेद 30 के तहत 6 मई 1991 को म्हाडा बोर्ड के समक्ष दो अपीलें उपरोक्त राशि को 18 प्रतिशत प्रतिवर्ष ब्याज की दर के साथ प्राप्त करने की दायर की। 14 जून 1991 को आरसीसी ने बोर्ड को अपनी मांग पर निर्णय लेने का अनुरोध किया। 29 जून 1991 को आरसीसी ने महाराष्ट्र आवास एवं क्षेत्र विकास अधिनियम 1976 की धारा 173 के तहत म्हाडा को 60 दिवस की अवधि के भीतर अपनी मांग को निर्धारित करने हेतु नोटिस जारी किया। चूंकि मांग का निपटारा नहीं हुआ और भुगतान नहीं किया गया तो आरसीसी ने न्यायालय वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश औरंगाबाद में दो वाद यथा विषिष्ट दीवानी वाद संख्या 265/19 जो कि 19,01,600 रूपए की राशि व इस पर वाद दायरी की दिनांक से वसूली की दिनांक तक 18 प्रतिशत ब्याज दर की राशि के लिए और 266/19 जो कि 2108100 रूपए की राशि व इस पर वाद दायरी की दिनांक से वसूली की दिनांक तक 18 प्रतिशत ब्याज दर की राशि की वसूली के लिए दायर किए गए। न्यायालय वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश औरंगाबाद ने म्हाडा को सम्मन जारी किए। म्हाडा ने मुकदमे में लिखित जबाब पेश किया। 3 सितंबर 1993 को न्यायालय ने विषिष्ट दीवानी वाद संख्या



266/19 में एवं 27 अक्टूबर, 1993 को न्यायालय ने विषिष्ठ दीवानी वाद संख्या 265/19 में विवाद्यक विरचित किए। 5 जनवरी 1995 को आरसीसी ने एक प्रार्थना पत्र अंतर्गत धारा 21 मध्यस्थता अधिनियम 1940 में पांच अधिकारियों का नाम देते हुए एकमात्र मध्यस्थ की नियुक्ति संविदा के अनुच्छेद 30 के आलोक में विवाद के निपटारे हेतु पेश किया। जिसकी प्रति प्रतिवादी म्हाडा को तुरंत दी गई और अदालत ने दूसरे पक्ष को बुलाओ का आदेश पारित किया। 10 मार्च 1995 में म्हाडा में प्रार्थना पत्र प्रदर्ष 45 पेश किया जिसमें उन्होंने एकमात्र मध्यस्थ की नियुक्ति पर अनापत्ति जाहिर की किंतु तीन भिन्न नाम मध्यस्थ हेतु सुझाए। 3 अप्रैल 1995 को आरसीसी ने अपने प्रार्थना पत्र प्रदर्ष 47 के माध्यम से एसआर वाडेकर जिनका नाम म्हाडा द्वारा सुझाया गया था को एकमात्र मध्यस्थ नियुक्त किए जाने व मामले को उन्हें सुनवाई हेतु भेजे जाने पर अपनी सहमति व्यक्त की। उपरोक्त करार के अनुसरण में विद्वान वरिष्ठ सिविल न्यायाधीष औरंगाबाद ने दिनांक 6 अप्रैल, 1995 प्रदर्ष 47 व 7 अप्रैल 1995 प्रदर्ष 51 को आदेश पारित किया। आदेश प्रदर्ष 47 इस प्रकार है:-

आदेश प्रदर्ष 47 निम्न प्रकार है:-

“श्री एस-आर वाडेकर पूर्व मुख्य अभियंता को एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया जाता है, जो सुसंगत और आवश्यक रिकॉर्ड के साथ करार की शर्ता का निपटारा करेंगे।

एकमात्र मध्यस्थ न्यायालय से रिकॉर्ड एकत्रित कर रिपोर्ट करेगा तथा इस आदेश की दिनांक से 60 दिवस के भीतर बिना किसी देरी के पंचाट तैयार करेगा।"

न्यायालय ने तब आदेश दिया।

“परिणामस्वरूप आपको इस मामले में एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया जाता है। तदुसार पक्षकारान के मध्य विवादों और दावों को मध्यस्थ के लिए आपके समक्ष प्रेषित किया जाता है।”

आपसे अपेक्षित है कि मध्यस्थता अधिनियम 1940 के प्रावधानुसार आप कार्यवाही पूरी कर पंचाट को न्यायालय द्वारा नियत समयावधि में न्यायालय में पेश करेंगे।

आप इस संदर्भ में पार्टियों के साथ खर्च व व्यय की शर्तें तय कर सकते हैं। (2000 रूपए कोर्ट में जमा हुए।)

कृपया पार्टियों को यथाशीघ्र सूचित करे।

^^कृपया इस आदेश की प्राप्ति की स्वीकृति दें।\*\*

उसी दिन न्यायालय में एकमात्र मध्यस्थ श्री वाडेकर को आदेश के बारे में सूचित किया। श्री वाडेकर ने पत्र दिनांकित 10 अप्रैल 1995 के माध्यम से अपनी स्वीकृति भेजी। इसके बाद मध्यस्थ ने कार्यवाही की। सिविल न्यायालय से रिकॉर्ड को तलब किया और उसकी जांच की। उन्होंने

निर्माणस्थल का भी दौरा किया। सभी दस्तावेजों, निविदा संविधा के नियमों और शर्तों और अन्य सुसंगत रिकॉर्डों को देखने व पक्षकारान को सुनने के बाद उन्होंने 17 अगस्त 1995 को पंचाट पारित किया। उन्होंने विभिन्न मदों के तहत किए गए दावों पर विचार कर प्रथम योजना के संबंध में 1436708 रूपए की राशि व द्वितीय योजना के संबंध में 118099 रूपए की राशि प्रदान की। मध्यस्थ द्वारा 18 प्रतिषत प्रतिवर्ष ब्याज दर से मूल राशि पर दावा दायरी की दिनांक से पंचाट पारित करने की दिनांक तक व पंचाट पारित करने की दिनांक से भुगतान या डिक्री की तारीख, जो भी पहले हो तक 18 प्रतिषत प्रतिवर्ष ब्याज दर भी दिलाया गया।

मध्यस्थ ने इन दोनों पक्षों को नोटिस जारी कर पंचाट पारित होने की जानकारी दी। मध्यस्थ ने पंचाट न्यायालय में भी पेश किया। दिनांक 16 सितंबर, 1995 को न्यायालय में पंचाट का सीलबंद लिफाफा खोला गया। दिनांक 13 अक्टूबर 1995 को म्हाडा ने धारा 30 के अंतर्गत पंचाट के विरुद्ध आपत्ति दर्ज की। जो कि प्रदर्ष 62 और 66 है। दिनांक 16 अक्टूबर, 1995 में आरसीसी ने म्हाडा के प्रार्थना पत्र पर अपनी आपत्तियां पेश की। जो कि प्रदर्ष 63 व 67 है। उसी दिन अधिनियम की धारा 17 के अंतर्गत आरसीसी ने मध्यस्थ पंचाट को न्यायालय क नियम के रूप में माने जाने बाबत् आदेश सुनाए जाने हेतु प्रार्थना पत्र पेश किए जो कि प्रदर्ष 64 व 68 है। 25 अप्रैल 1996 को वरिष्ठ सिविल न्यायाधीष औरंगाबाद द्वारा अपने आदेश से मध्यस्थ के पंचाट को ^^न्यायालय का नियम\*\*

घोषित किया। उन्होंने तदुसार डिक्री तैयार करने का आदेश भी पारित किया। सिविल न्यायालय के उपरोक्त फेसले के खिलाफ म्हाडा ने दो प्रथम अपीलें दायर कीं। उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ ने वर्तमान अपीलों में दिए गए फेसले से, उन अपीलों को मंजूर कर विचारणीय न्यायालय के आदेश को अपास्त कर करार की कार्यवाही को पुनः सुनवाई एवं पुनः पंचाट पारित करने हेतु एकमात्र मध्यस्थ को भेज दिया। उच्च न्यायालय के अनुसार मध्यस्थ द्वारा पारित पंचाट में कारण दर्शित नहीं किए गए थे। इस कारण उक्त पंचाट कानून के अनुरूप नहीं था। उच्च न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि अधिनियम की धारा 30 के तहत पंचाट अपोषणीय था।

न्यायालय ने लिखा।

“परिणामस्वरूप हमारा विचार है कि विचारणीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश जिसमें उनके द्वारा एकमात्र मध्यस्थ के आदेश को न्यायालय का नियम\*\* बनाया गया है प्रथम दृष्टया त्रुटियों से ग्रस्त होने के कारण अपोषणीय हैं। मध्यस्थ द्वारा की गई कार्यवाही इस हद तक गलत है कि मध्यस्थ को न्यायालय द्वारा विरचित विवाधकों को तय कर जो विवाधक उनके द्वारा स्वीकृत किए गए हैं, उनके संबंध में उनके द्वारा कारण बताने की आवश्यकता थी। इसके अतिरिक्त मध्यस्थ द्वारा 18 प्रतिषत प्रतिवर्ष ब्याज दर का

भुगतान वादकालीन अवधि के बाद भी दिया गया है। जिनका उनके द्वारा कोई कारण चाहे कितना भी छोटा क्यों ना हो नहीं दिया गया है। इसलिए उक्त आदेश भी अपोषणीय है। इसलिए हम करार की कार्यवाही को पुनः मध्यस्थ को नवीन पंचाट हेतु भेजना उचित समझते हैं और विचारणीय न्यायालय उसकी जांच कर धारा 21 के अंतर्गत अपना आदेश पारित करेगा।

फलतः अपीलें स्वीकार की जाती हैं और विचारणीय न्यायालय द्वारा विषिष्ट दीवानी वाद संख्या 265/19 व 266/19 में पारित डिक्रियों को अपास्त कर रद्द किया जाता है। विचारणीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश के क्रम में मध्यस्थ श्री एसआर वाडेकर द्वारा की गई मध्यस्थता कार्यवाहियों को बहाल किया जाता है। मध्यस्थ पक्षकारान की उपस्थिति की दिनांक से 60 दिवस के भीतर नवीन पंचाट पारित करेगा। पक्षकारान को आदेष्टित किया जाता है कि वह मध्यस्थ के समक्ष उपस्थित हों। खर्चों के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाता है।”\*\*

उपरोक्त निर्णय का आरसीसी ने वर्तमान अपीलों में विरोध किया है।

हमने पक्षकारान के अधिवक्ता को सुना।

आरसीसी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उच्च न्यायालय ने विचारणीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप कर मध्यस्थ द्वारा पारित पंचाट को कारणों के अभाव में अपास्त कर विधि की भूल की है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उच्च न्यायालय का यह मानना गलत था कि मध्यस्थ द्वारा पारित आदेश तर्कसंगत होना चाहिए था। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार मध्यस्थता अधिनियम 1940 (संक्षेप में पुराने अधिनियम) के रूप में संबोधित किया जाएगा) के तहत मध्यस्थ पर कारण अभिलिखित करने की कोई बाध्यता नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि बेषक वर्तमान कार्यवाहियां पुराने अधिनियम से शासित होती हैं एवं मध्यस्थता एवं सुलह अधिनियम 1996 (संक्षेप में नये अधिनियम के रूप में संबोधित किया जाएगा) इन पर लागू नहीं है और नये अधिनियम के प्रावधानों को म्हाडा द्वारा इस कार्यवाही पर लागू नहीं करवाया जा सकता। चूंकि पुराने अधिनियम के तहत मध्यस्थ द्वारा कारण अभिलिखित करना अनिवार्य नहीं था और पक्षकारान द्वारा भी ऐसी कोई संविधा नहीं की गई थी, जिसमें मध्यस्थ को कारण अभिलिखित करना अनिवार्य हो। ऐसी स्थिति में मध्यस्थ किसी भी तरह से कारण अभिलिखित कर पंचाट पारित करने हेतु बाध्य नहीं था। परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय द्वारा पंचाट को अपास्त करने के आदेश विधिविरुद्ध हैं। निवेदन किया गया कि मध्यस्थ द्वारा पुराने अधिनियम में दी गई प्रकिया की पालना की गई। उनके द्वारा समस्त कार्यवाही पक्षकारान को तलब कर सुनवाई का अवसर प्रदान कर

की गई। उनके द्वारा निर्माणस्थल का भी दौरा किया गया। उनके द्वारा सुसंगत दस्तावेजात पक्षकारान के अभिवचनों सुसंगत रिकॉर्ड का अवलोकन कर अपने विवेक का इस्तेमाल कर पंचाट पारित किया। जो कि विधि अनुरूप है। विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी जाहिर किया गया कि विचारणीय न्यायालय द्वारा जिनके समक्ष पंचाट को कानून का रूप देने हेतु प्रस्तुत किया, भी म्हाडा द्वारा प्रस्तुत आपतियों पर पुनः विचार किया गया। उन्होंने आपतियों को अस्वीकार कर विस्तृत निर्णय द्वारा पंचाट को न्यायालय का नियम बनाने का आदेश दिया और तदुसार डिक्री बनाने के भी आदेश दिए। इन परिस्थितियों में उक्त न्यायालय के पास मध्यस्थ द्वारा पारित पंचाट और विचारणीय न्यायालय द्वारा पारित निर्णय व आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं था। इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश अपास्त कर रद्द किए जाने योग्य हैं।

दूसरी ओर, प्रतिवादी म्हाडा के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश का समर्थन किया। उन्होंने निवेदन किया कि चूंकि पक्षकारान के मध्य विवाद था, इस कारण आरसीसी ने दो दीवानी वाद सिविल न्यायालय को दायर किए। इन वादों में म्हाडा द्वारा लिखित कथन पेश कर आरसीसी द्वारा चाहे गए अनुतोष की पोषणीयता एवं चाही गई राशि के विरुद्ध कई आपतियां उठाई गईं। पक्षकारान के अभिवचनों के आधार पर विवाधक कायम किए गए एवं तदोपरांत आरसीसी द्वारा एक प्रार्थना पत्र पेश कर मामले को मध्यस्थ के समक्ष भेजे जाने का निवेदन

किया। तथ्यों एवं परिस्थितियों के दृष्टिगत यह स्पेशट था कि मध्यस्थ एक “^ वैकल्पिक मंच\*\* है। इस कारण मध्यस्थ पर पक्षकारान के प्रतिद्वंदी अभिवचनों पर अपने विवेक का उपयोग करने न्यायालय द्वारा विरचित विवाधकों पर विचार करने एवं विवाधकों पर निष्कर्ष कारण सहित अभिलिखित कर निर्णय देने का दायित्व था। चूंकि मध्यस्थ द्वारा इन पहलुओं को और उन तथ्यों एवं परिस्थितियों को जिनमें उसे मामला प्रेषित किया गया था को पूर्णतः नजरअंदाज किया गया इस कारण पंचाट विवेक के अभाव में दूषित था और विचारणीय न्यायालय ऐसे पंचाट को न्यायालय का नियम बनाये जाने में एवं उस पर डिक्री बनाए जाने में गलत था। उच्च न्यायालय का ऐसे पंचाट व विचारणीय न्यायालय के ऐसे फेसले और आदेश को अपास्त करने का और प्रकरण को पुनः मध्यस्थ को विधि अनुसार निर्धारित करने हेतु भेजने का आदेश पूर्णरूपेण उचित था। यह भी निवेदन किया गया कि भले ही प्रस्ताव या संविधा में कारणों को अभिलिखित करने के संबंध में कोई अनुच्छेद नहीं था किंतु फिर भी मध्यस्थ को चूंकि उसके द्वारा प्रश्नों पर विचार कर मामले का निर्णय किया जाना था प्रश्नों पर अपने आदेश निष्कर्ष व निर्णय के समर्थन में कारण अभिलिखित करना अनिवार्य था। विद्वान अधिवक्ता ने इसलिए निवेदन किया कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई मामला नहीं बनता है और अपील खारिज किए जाने योग्य है।



पक्षकारान की प्रतिद्वंदी दलीलों पर उत्सुकतापूर्वक और विचारपूर्वक विचारण करने के बाद हमारी राय में अपीलें आंशिक रूप से स्वीकार की जाने योग्य हैं। हमारे अनुसार मुख्य प्रश्न यह है कि क्या मध्यस्थ को अपने द्वारा पारित आदेशों के समर्थन में कारण अभिलिखित करने की आवश्यकता थी। यदि यह मध्यस्थ का कर्तव्य था तो म्हाडा के तर्कों को यह मानते हुए बरकरार रखा जाना चाहिए कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश कानून के अनुरूप था और निर्णय में कोई दोष नहीं था। वहीं दूसरी ओर यदि कानूनन ऐसी कोई आवश्यकता नहीं थी और मध्यस्थ अपने द्वारा पारित आदेशों के समर्थन में कारण अभिलिखित करने हेतु बाध्य नहीं था, तो उन्हें केवल कारण अभिलिखित नहीं करने के आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता था और उच्च न्यायालय को उक्त पंचाट में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था और विचारणीय न्यायालय द्वारा पारित फेसले व आदेश को अपास्त कर पलटना नहीं चाहिए था।

आरसीसी के विद्वान अधिवक्ता ने इस बिंदु के संदर्भ में निर्णित विधियों की तरफ हमारा ध्यान आकर्षित किया। हम उनमें से केवल कुछ ही का उल्लेख करेंगे। रायपुर विकास प्राधिकरण एवं अन्य बनाम मैसर्स चोखामल कॉन्ट्रैक्टर्स और अन्य (1989) 2 एससीसी 721 वास्तव में इस बिंदु पर इस न्यायालय का एक प्रमुख निर्णय है। इस न्यायालय की एक संविधान पीठ से एक समान प्रश्न पर विचार करने के लिए कहा गया था जो हमारे समक्ष उठाया गया है, अर्थात् क्या (पुराने अधिनियम) के तहत

पारित पंचाट को धारा 30 के तहत अपास्त किया जाना चाहिए था या धारा 16 के तहत पुनः प्रेषित मात्र इस आधार पर किया जाना चाहिए था कि मध्यस्थ द्वारा अपने पंचाट के समर्थन में कोई कारण अभिलिखित नहीं किए गए हैं।

कानून के सुसंगत प्रावधानों इंग्लैंड अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया में कानून की स्थिति पर विचार करने के बाद और इस बिंदु पर सभी प्रमुख निर्णित विधियों के उल्लेख के बाद इस न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि (पुराने) अधिनियम के तहत पारित एक पंचाट केवल इस आधार पर अपास्त या पुनः प्रेषित नहीं किया जा सकता कि पंचाट के समर्थन में कोई कारण अभिलिखित नहीं किया गया था। न्यायालय द्वारा रोनाल्ड बर्नस्टीन की मध्यस्थता अभ्यास पर लिखी हस्तपुस्तिका का भी अवलोकन किया, जिसमें लिखा था कि, 'कारणों का अभाव एक पंचाट को अमान्य नहीं करता है। कई मध्यस्थताओं में पक्षकार जो कि अधिकरण की स्थिति और सत्यनिष्ठा का सम्मान करते हैं, वे अधिकरण से त्वरित निर्णय चाहते हैं और वे अधिकरण द्वारा हां या ना में उत्तर देने में व एक मूल्य बताने मात्र में संतुष्ट होते हैं। ऐसा पंचाट निसंदेह पूर्णतया प्रभावी है और कहा जा सकता कि यह कारणों सहित पंचाट से अधिक प्रभावी है और इसके विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती कि ये कानूनन गलत है।

(जोर दिया गया)

इसके बाद न्यायालय ने कहा%

“अब यह तय हो गया है कि कोई पंचाट न तो पुनः भेजा जा सकता है और ना ही केवल इस आधार पर अपास्त किया जा सकता कि इसमें निष्कर्ष या निर्णय के समर्थन में कोई कारण अभिलिखित नहीं किया गया है, सिवाय ऐसे प्रकरणों को छोड़कर जहां मध्यस्थता करार या प्रस्तुत करने के विलेख में मध्यस्थ द्वारा कारण अभिलिखित करना अनिवार्य किया गया हो। मध्यस्थ या अंपायर अपने द्वारा लिए गए निर्णय के समर्थन में कारण अभिलिखित करने के लिए बाध्य नहीं है जब तक कि मध्यस्थता करार या प्रस्तुत करने के विलेख में उसके द्वारा कारण अभिलिखित किया जाना आवश्यक हो और यदि मध्यस्थ या अंपायर द्वारा अपने निर्णय के समर्थन में कारण अभिलिखित किए गए हैं तो न्यायालय ऐसे कारणों का अवलोकन कर यदि यह पाता है कि मध्यस्थ या अंपायर द्वारा कानून की प्रथमदृष्टया भूल की गई है तो मध्यस्थ या अंपायर द्वारा पारित आदेश को अपास्त कर सकेगा। मध्यस्थ या अंपायर, जहां न्यायालय द्वारा आदेष्टित किया गया है यथा जहां अधिनियम की धारा 20 या धारा 21 या धारा 34 में कारण दिये जाने हेतु आदेष्टित किया गया है या जहां विधि, जो मध्यस्थता को

शासित करती है, की आवश्यकता है वहां कारण अभिलिखित करेगा।"

इस न्यायालय की राय में, यह विवादित नहीं हो सकता कि भारत में यह अटल रूप से स्थापित किया गया है कि मध्यस्थ या अंपायर पंचाट के समर्थन में कारण अभिलिखित करने हेतु बाध्य नहीं है। जब तक कि मध्यस्थता करार या प्रस्तुत करने के किसी विलेख में मध्यस्थ द्वारा कारण अभिलिखित करना आवश्यक नहीं किया गया है। ऐसे मामले में भी, यह आग्रह किया गया जैसा कि हस्तगत मामले में किया गया है, कि यदि मध्यस्थ द्वारा किसी कारण का खुलासा नहीं किया जाता है, तो न्यायालय के लिए यह पता लगाना संभव नहीं होगा कि पारित पंचाट कानून के अनुसार है अथवा नहीं।

हालाँकि न्यायालय ने इस तर्क को यह कहते हुए नकारा कि यदि पक्षकार मध्यस्थ या अंपायर द्वारा पारित पंचाट के समर्थन में कारणों का उल्लेख करवाना चाहते हैं तो वह इस संबंध में समझौते/संविधा में प्रावधान करने हेतु स्वतंत्र है लेकिन संविधा में ऐसी किसी शर्त के अभाव में न्यायालय यह नहीं कह सकता है कि मध्यस्थ कारण अभिलिखित करने के लिए कर्तव्यबद्ध था और यदि पंचाट के समर्थन में कारण अभिलिखित नहीं किए गए हैं तो पंचाट आलोचनीय था और अपास्त किए जाने या मध्यस्थ को पुनः प्रेषित किए जाने योग्य था। इस न्यायालय के अनुसार,

इस तरह का आदेश वस्तुतः न्यायिक निर्णय द्वारा अधिनियम में संशोधन करने के बराबर होगा। निसंदेह यदि मध्यस्थ या अंपायर द्वारा पंचाट के समर्थन में कारण अभिलिखित किए जाते हैं तो न्यायालय द्वारा उन पर विचार किया जा सकता है और यदि उन कारणों से प्रथमदृष्टया त्रुटि का खुलासा होता है तो पंचाट को सक्षम न्यायालय द्वारा अपास्त किया जा सकता है लेकिन करार में ऐसी आवश्यकता के अभाव में पक्षकार पंचाट के समर्थन में कारणों को अभिलिखित करने पर जोर नहीं दे सकते हैं और न ही न्यायालय ऐसे कारणरहित पंचाट में हस्तक्षेप कर सकता है। हालाँकि, यह तर्क दिया गया कि आदेश के समर्थन में कारणों को अभिलिखित करना 'प्राकृतिक न्याय' का ही अंश है और इस हिसाब से भी कारणरहित पंचाट को शून्य और निष्प्रभावी माना जाना चाहिए। हम इस तर्क का समर्थन करने में असमर्थ हैं। चोखामल में भी इसी तरह का विवाद उठाया गया था और इस न्यायालय द्वारा यह कहते हुए नकार दिया गया था कि उक्त सिद्धांत प्रशासनिक विधि के क्षेत्र में लागू होता है। प्रशासनिक विधि से संबंधित निर्णयों में इस न्यायालय ने हमेशा आदेश या निर्णय के समर्थन में कारणों को अभिलिखित करने पर जोर दिया है। न्यायालय ने कहा कि यह सिद्धांत 'सार्वजनिक कानून' क्षेत्र पर लागू होगा और 'निजी कानून' क्षेत्र जैसे कि मध्यस्थता करार पर लागू नहीं होगा।

न्यायालय ने कहा:

^ निःसंदेह यह सही है कि प्रशासनिक कानून से संबंधित निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा कुछ मामलों में यह कहा है कि प्रशासनिक निर्णयों में कारण अभिलिखित करना प्रचलित नियम के विस्तार से प्राकृतिक न्याय का नियम है। यह वाणिज्यिक जगत के हित में होगा कि उक्त नियम प्रशासनिक विधि के क्षेत्र तक ही सीमित रहे। हम पक्षकारान द्वारा प्रस्तुत इस तर्क का समर्थन नहीं करते जो कि मध्यस्थ को अपने पंचाट के समर्थन में कारणों को अभिलिखित करने हेतु अनिवार्य रूप से उत्तरदायी करता है और कहता है कि मध्यस्थता के कानून के दायरे में आने वाले छोटे क्षेत्र को सामान्य नियम से बाहर रखने का कोई औचित्य नहीं है और प्रत्येक न्यायिक और अर्ध-न्यायिक निकाय को अपने निर्णय के समर्थन में कारणों को अभिलिखित किया जाना चाहिए। साथ ही ध्यान में रखना होगा कि सार्वजनिक कानून जो आम तौर पर जनता द्वारा शासित अधिकारियों के विवादों के निपटारे के लिए उपयोग में लिया जाता है, उसका विस्तार निजी कानून के तहत उत्पन्न होने वाले विवाद जैसे कि मध्यस्थता विधि के अधीन उद्भव विवाद के संबंध में नहीं किया जाना चाहिए।

(जोर दिया गया)

इस न्यायालय द्वारा यह टिप्पणी की गई कि सभी न्यायालय द्वारा यह अविरोधी दृष्टिकोण लिया गया है कि एक पंचाट को केवल उसके समर्थन में कारण अभिलिखित नहीं किए जाने के कारण अपास्त नहीं

किया जा सकता है जब तक कि मध्यस्थता करार या प्रस्तुत करने वाले विलेख में या न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 2021 या 34 के तहत आदेश में या मध्यस्थता को शासित करने वाली किसी विधि में मध्यस्थ या अंपायर को अपने पंचाट के समर्थन में कारण अभिलिखित करने हेतु बाध्य किया गया है। हमारी राय में चोखामल का निर्णय अनुपात हस्तगत प्रकरण पर लागू होता है। उस प्रकरण में अभिनिर्धारित विधि को इस न्यायालय द्वारा कई मामलों में दोहराया गया है। (देखें टी एन विद्युत बोर्ड बनाम ब्रिज टनल कंस्ट्रक्शन और अन्य (1997) 4 एस सी सी 121 कुंडल एंड एसोसिएट्स बनाम कॉकण होटल्स (पी) लिमिटेड (1999) 3 एस सी सी 533 बिल्ड इंडिया कंस्ट्रक्शन सिस्टम बनाम भारत संघ (2002) 5 एस सी सी 433),

टी एन विद्युत बोर्ड में इस न्यायालय ने पुराने अधिनियम के साथ-साथ नया अधिनियम और विशेष रूप से नए अधिनियम की धारा 31 की उप-धारा (3) जो मध्यस्थ द्वारा पंचाट के समर्थन में कारणों को अभिलिखित करने का प्रावधान करती है, जब तक कि पक्षकार इस बात पर सहमत हुए हैं कि कोई कारण नहीं दिया जाना चाहिए या (ख) पंचाट धारा 30 के तहत सहमत शर्तों पर एक मध्यस्थ पंचाट है का अवलोकन किया। न्यायालय ने कहा कि संसद ने विधायी निर्णय व्यक्त किया था कि पंचाट में उन कारणों का उल्लेख होना चाहिए जिनके आधार पर उसे पारित

किया जाता है कि जब तक कि पक्षकार अन्यथा सहमत न हों या पंचाट सहमत शर्तों पर न हो।

वर्तमान पंचाट नये अधिनियम के तहत नहीं बल्कि पुराने अधिनियम के तहत है इसलिए यह स्पेशट है कि उच्च न्यायालय द्वारा इसे कारणों के अभाव में खारिज नहीं किया जा सकता था।

प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान पंजाब राज्य बनाम भाग सिंह, (2004) आई एस सी सी 547 में इस न्यायालय के फेसले की ओर आकर्षित किया और तर्क दिया कि इस न्यायालय ने माना है कि आदेश के समर्थन में कारणों को अभिलिखित किया जाना चाहिए। इस प्रकरण में उच्च न्यायालय द्वारा बिना कोई कारण अभिलिखित किए बरी किए जाने के आदेश के खिलाफ प्रस्तुत अपील को खारिज कर दिया था।

राज्य ने इस न्यायालय का रुख किया। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को पलटते हुए इस न्यायालय ने माना कि सत्र न्यायालय द्वारा पारित किए गए दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध अपील में उच्च न्यायालय को कारण अभिलिखित करने होंगे क्योंकि उच्च न्यायालय विवेक का उपयोग कर इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि विचारणीय न्यायालय द्वारा पारित दोषमुक्ति का आदेश विधि के अनुरूप है अथवा नहीं, के लिए बाध्य है। हमारी राय में भाग सिंह में निर्धारित अनुपात, हस्तगत प्रकरण के तथ्यों पर लागू नहीं होता है।



वकील ने ब्रीन बनाम अमलागमेटेड इंजीनियरिंग यूनियन (1971) 1 ऑल ई आर 1148 में लॉर्ड डेनिंग एम आर की टिप्पणियों पर भरोसा किया। वहां न्यायाधपति द्वारा टिप्पणी किया गया है कि कारण अभिलिखित किया जाना अच्छे प्रशासन के बुनियादी सिद्धांतों में से एक है\*। अलेक्जेंडर मशीनरी (डेडली) लिमिटेड बनाम क्रेबट्री 1974 आई सी आर 120 का भी संदर्भ दिया गया था। जिसमें यह निर्धारित किया गया था कि कारण देने में विफलता न्याय से इनकार करने के बराबर है। कारण निर्णय लेने वाले के दिमाग में संबंधित विवाद और उसके द्वारा लिए गए निर्णय या निष्कर्ष के बीच जीवंत संबंध हैं। कारण व्यक्तिपरकता को वस्तुनिष्ठता से प्रतिस्थापित करते हैं। कारणों को अभिलिखित करने पर जोर इसलिए दिया जाता है कि यदि निर्णय के रहस्य का गूढ चेहरा सामने आ जाता है तो वह अपनी चुप्पी से न्यायालयों के लिए अपने अपीलीय कार्य को पूरा करना या निर्णय की वैधता का निर्णय लेने में न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करना लगभग असंभव बना सकता है।

जैसा कि हमने पहले ही देखा हैं। ये सभी सिद्धांत प्रशासनिक कानून और सार्वजनिक कानून क्षेत्र पर लागू होते हैं। ये निजी कानून के क्षेत्र में आकर्षित नहीं होंगे।

न्यायालय, ऐसे मामलों में अपीलीय क्षेत्र अधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता है और मध्यस्थ के निर्णय के स्थान पर अपने निर्णय को

प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है। इसलिए इन सिद्धांतों का पक्षकारान की सहमति से मध्यस्थ द्वारा दिए गए निर्णय जो कि अन्यथा वैध है की वैधता के विचारण में कोई स्थान नहीं है।

विद्वान अधिवक्ता ने गौरा लाल बनाम भारत संघ, (2003) 12 एस सी सी 459 में इस न्यायालय के निर्णय का भी आसरा लिया। इस मामले में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जब मध्यस्थ को अपने निष्कर्ष देने होते हैं तो उसके लिए उसे कारण अभिलिखित करना अनिवार्य होता है। गौरा मल में मध्यस्थता का सुसंगत अनुच्छेद निम्नानुसार था।

मध्यस्थ को उस तारीख को संदर्भ में शामिल माना जाएगा जब वह दोनों पक्षों को नोटिस जारी करता है जिसमें उन्हें अपने मामले के साक्ष्य और बचाव में अपने अभिवचनों को प्रस्तुत करने को कहता है।

मध्यस्थ समय-समय पर पक्षकारान की सहमति से पंचाट देने व प्रकाशित करने के संदर्भ में समयावधि बढ़ा सकता है किंतु प्रवेश की तारीख से अधिकतम एक वर्ष तक की समयावधि बढ़ा सकता है उससे अधिक नहीं।

मध्यस्थ को संदर्भ में प्रवेश करने की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर या उसके द्वारा संदर्भित सभी मामलों पर विस्तारित अवधि के भीतर अपना निर्णय देना होगा और विवाद की प्रत्येक विषयवस्तु पर अपना निष्कर्ष व दी गई धनराशि को अलग से इंगित करना होगा।

यह देखते हुए कि 'निष्कर्ष' शब्द विवाद की प्रत्येक विषयवस्तु पर निष्कर्ष के समर्थन में 'कारणों' को दर्शाता है। न्यायालय ने माना कि मध्यस्थ को अपने निष्कर्षों के समर्थन में कारण अभिलिखित करने की आवश्यकता है। हालांकि न्यायालय ने आगे कहा 'हम यह स्पष्ट करते हैं कि यह आदेश इस मामले के तथ्यों तक ही सीमित है और हमारी व्याख्या इस मामले में मध्यस्थता करार के अनुच्छेद 70 तक ही सीमित है।' इस प्रकार गोरा लाल को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत तथ्य स्थिति को देखते हुए निर्धारित किया गया और करार के सुसंगत अनुच्छेद और उस प्रकरण में दिए गए अनुपात से वर्तमान प्रकरण में पारित पंचाट समान सुसंगत अनुच्छेद के अभाव में अवैध या गैरकानूनी नहीं माना जा सकता है।

उपरोक्त कारणों से एकमात्र मध्यस्थ द्वारा पारित पंचाट को अवैध या गैरकानूनी नहीं माना जा सकता है। ऐसे पंचाट को न्यायालय का नियम बनाते समय वरिष्ठ सिविल जज औरंगाबाद के न्यायालय ने कोई ऐसी अवैधता नहीं की थी जिससे पंचाट को अपोषणीय किया जा सके और उच्च न्यायालय उन्हें अपास्त नहीं कर सकता था।

फिर सवाल ब्याज का ही रहता है। अपीलकर्ता ने दावे में ब्याज का अनुतोष चाहा था। मध्यस्थ ने दावा दायरी की तारीख से पंचाट की तारीख तक और पंचाट की तारीख से भुगतान या डिक्री की तारीख, जो भी पहले है तक मूल राशि पर 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज दिया था।

इस न्यायालय ने पूर्व- संदर्भ अवधि (कार्यकारी अभियंता ढेंकनाल लघु सिंचाई प्रभाग और अन्य बनाम एन सी बुधरा मृत एल आर और अन्य द्वारा 2001 2 एस सी सी 721) वाद के दौरान (सचिव सिंचाई विभाग उड़ीसा सरकार और अन्य बनाम जी सी रॉय 1992 1 एस सी सी 508 और पंचाट- पेश्वात् अवधि (हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड अ जम्मू और कश्मीर राज्य 1992 4 एससीसी 217) में मध्यस्थ की ब्याज देने की शक्तियों पर विचार किया है।

भगवती ऑक्सीजन लिमिटेड बनाम हिंदुस्तान कॉपर लिमिटेड, 1स् (2005) एससी 2071 जे टी (2005) 4 एस सी 73 में हममें से एक सी के ठक्कर जे को मध्यस्थ की तीनों चरणों में ब्याज देने की शक्तियों पर प्रमुख निर्णित विधियों पर विचार करने का अवसर मिला।

यह अभिनिर्धारित किया गया था कि मध्यस्थ के पास ब्याज देने की शक्ति है। वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए कि संविधा 1987 में की गई म्हाडा द्वारा दिए गए विस्तार के बाद 1990 में काम पूरा किया गया था और मध्यस्थ ने 1995 में पंचाट पारित किए थे, यह उचित न्यायसंगत और न्याय के हित में होगा यदि हम ब्याज की दर को घटाकर 10 प्रतिशत प्रति वर्ष कर दें।

उपरोक्त कारणों से, हमारी राय में अपीलों को आंशिक रूप से स्वीकार कर उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप किया जाना चाहिए।

इसलिए, हम आंशिक रूप से मध्यस्थ द्वारा दिए गए पंचाटों की पेशिठ करने वाली अपीलों को स्वीकार करते हैं। हालाँकि, हम प्रतिवादी म्हाडा को मध्यस्थ द्वारा दिए गए 18 प्रतिशत प्रतिवर्ष के ब्याज के बजाए 10 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भुगतान करने का निर्देश देते हैं। पंचाटों में दिए गए अन्य निर्देशों की पेशिठ की जाती है। ऊपर बताई गई हद तक अपीलें स्वीकार की जाती हैं। खर्च के संबंध में कोई आदेश नहीं किया जाता है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी वीना मोहनानी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।